असम का सुप्रसिद्ध मूंगा सिल्क

बिमल श्रीवास्तव

कुछ वर्ष पूर्व मेरी नियुक्ति गुआहाटी हवाई अड्डे पर हुई थी। वहां पर प्रायः मैं सम्भ्रांत महिलाओं को एक विशेष प्रकार की आकर्षक साड़ी पहने देखता था। यह साड़ी सदैव भूरे सुनहरे रंग की झिलमिली-सी होती थी। उस पर अधिकतर पारंपरिक ढंग से लाल या काली बार्डर तथा हरे, लाल अथवा पीले रंग से बूटों आदि की कढ़ाई रहती थी। कुछ समय पश्चात जब मैं असम के एक विवाह समारोह मैं गया, तो वहां भी अधिकतर महिलाएं उसी प्रकार की अन्य चमकीली-भूरी सुनहरी साड़ियां पहन कर आई थीं। अनेक पुरुषों ने भी उसी प्रकार के भूरे सुनहरे रंग के कुर्ते पहने हुए थे। बस केवल रंगों में हल्के या गहरे का अंतर था। मैंने अपने एक असमी मित्र से पूछा कि यह कैसा भूरा-चमकीला कपड़ा है।

मित्र ने बताया कि यह भूरा नहीं बल्कि सुनहरा है। यह असम का सुप्रसिद्ध मूंगा सिल्क है जो सभी प्रकार के रेशमों में सबसे महंगा होता है। मूंगा का असमिया भाषा में अर्थ है पीला या गहरा भूरा। और इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि सम्पूर्ण विश्व में यह केवल असम तथा देश के उत्तर पूर्वी राज्यों में ही तैयार होता है। यह असम को प्रकृति द्वारा दिया गया अनमोल और अद्वितीय उपहार है।

मित्र ने यह भी बताया कि मूंगा सिल्क की साड़ियों की एक खूबी यह है कि अन्य रेशमी कपड़ों के विपरीत इनको ड्राई क्लीन कराने की आवश्यकता नहीं होती है, बल्कि उन्हें घर पर ही धोया जा सकता है। हर धुलाई के बाद इनका निखार बढ़ता ही जाता है। एक साड़ी औसतन 50 वर्ष तक खराब नहीं होती है। ऐसा माना जाता है कि मूंगा रेशम सभी प्रकार के प्राकृतिक रूप से तैयार किए जाने वाले कपड़ों में सबसे मज़बूत होता है। इसके अलावा इसे गर्मी या सर्दी किसी भी मौसम में पहना जा सकता है। असम के लोगों का मानना है कि मूंगा सिल्क के कपड़ों में अनेक औषधीय गुण भी होते हैं।

मूंगा रेशम एक विशेष रेशम के कीड़ों *एन्थेरिया असमेन्सिस* द्वारा बनाया जाता है। उल्लेखनीय है कि इन कीड़ों का जीव वैज्ञानिक नाम भी असम पर ही रखा गया है। ये कीड़े दो स्थानीय वृक्षों सोम (*मचीलस बाम्बीसिना*) तथा सोआलू (*लिटसे पोलीएन्था*) के पत्ते खाकर जीवित रहते हैं।

रेशम बनाने के लिए मूंगा रेशम के कीड़ों के अंडे इन वृक्षों के पत्तों पर रख दिए जाते हैं। कुछ दिनों में इल्लियां (कैटरपिलर) निकल आती हैं जो लगभग 2 मि.मी. लंबी होती हैं। ये इल्लियां खूब खाऊ होती हैं। लगभग 4-5 सप्ताह में ये इतना खा लेती हैं कि लगभग 30 मि.मी लंबी और खूब मोटी हो जाती हैं। इस बीच लगभग चार बार वे अपनी पुरानी त्वचा त्यागकर नई त्वचा धारण कर लेती हैं।

इसके बाद इनकी कोया (रेशमी धागे का कवच) बनाने की प्रक्रिया आरंभ होती है। मूंगा रेशम कीड़े की इल्ली अपनी लार से प्रोटीन युक्त गाढ़ा द्रव निकालती है। जो वायु के सम्पर्क में आने पर सूख जाता है जिससे एक धागे जैसा पदार्थ बनता है। इल्ली इसे अपने चारों ओर लपेटती जाती है जिससे कोया (ककून) बन जाता है।

इसी के साथ रेशम कीट अपने जीवन की तीसरी अवस्था में परिवर्तित हो जाता है जो प्यूपा कहलाता है। प्यूपा गोलमटोल निष्क्रिय पिंड जैसा होता है जो हिल-डुल नहीं सकता है। यह ककून के अंदर कैद-सा पड़ा रहता है। इल्ली से प्यूपा बनने में लगभग 4-5 दिन लगते हैं। ककून तैयार होने में लगभग 8 दिन का समय लगता है।

प्यूपा बनने के बाद की चौथी तथा अंतिम अवस्था पतंगा बनने की होती है। जिसमें लगभग 15 दिन लगते हैं। इसके बाद प्यूपा पतंगा बनकर ककून को काटकर उड़ जाता है। किंतु रेशम उत्पादन के दौरान इस अंतिम अवस्था की नौबत ही नहीं आती है क्योंकि उससे पहले ही मानव हस्तक्षेप के द्वारा ककून से रेशम निकाल लिया जाता है। इसके लिए ककून को धूप में सुखाकर या उबलते पानी में डाल दिया जाता है। इसके बाद रेशम के धागे को अलग करके उसकी रील बना ली जाती है।

ककून से निकला हुआ धागा आश्चर्यजनक रूप से लंबा, पतला तथा गांठरहित होता है। एक अकेले धागे की लंबाई 400 से 700 मीटर तक या उससे भी अधिक हो सकती है। ऐसे चार या आठ धागों को बंटकर रेशम का धागा बनता है, जिसे रीलों पर लपेट लिया जाता है। इसे ही कच्चा रेशम कहते हैं। प्रति वर्ष मूंगा रेशम की चार से छह फसलें तैयार होती हैं।

रेशम के उत्पादन में यदि प्यूपा से पतंगा बनने की प्रक्रिया पूरी हो जाती है, तो कीट ककून को काटकर उड़ जाता है। इस कटे हुए कोकून से एक लंबे धागे के बजाय रेशम की लटों के छोटे-छोटे टुकड़े निकलते हैं। इस रेशम के उपयोग के लिए इसे रूई की तरह धुन कर उसकी कताई की जाती है तथा फिर उससे रेशम बुना जाता है। इसे स्पन रेशम कहते हैं तथा इसका मूल्य अपेक्षाकृत कम होता है।

लगभग 750 ग्राम से एक किलो भार वाली अच्छी साड़ी तैयार होने में लगभग 6000 से 8000 ककून का उपयोग किया जाता है तथा इसमें लगभग दो महीने लगते हैं। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि मूंगा रेशम साड़ी कितनी महंगी होती होगी।

मूंगा सिल्क का दाम लगभम 4000 रुपये प्रति कि.ग्रा. होता है, जबकि शहतूत के पेड़ों पर पलने वाले कीटों द्वारा बनाए गए रेशम का मूल्य लगभग 1200 रुपये प्रति कि.ग्रा. होता है।

कहते हैं कि पुराने ज़माने में मूंगा की साड़ी केवल राजघराने (असम के अहोम सम्राटों) या बहुत बड़े सामंतों तक ही सीमित थी, साधारण लोगों द्वारा इसके उपयोग पर प्रतिबंध था।

अन्य प्रकार के रेशम

प्राकृतिक रूप से तैयार किए गए सभी प्रकार के रेशम, कीटों द्वारा उत्पन्न होते हैं। अधिकतर रेशम शहतूत पर पाए जाने वाले कीटों से बनता है।

मान्यता है कि रेशम का आविष्कार लगभग 4000 वर्ष पूर्व चीन के सम्राट हुआंग-ली की साम्राज्ञी सी-लिंग-ची ने किया था। एक बार बाग में चाय पीते समय उसके गर्म चाय के प्याले में शहतूत के पेड़ों से एक रेशम का कोकून आ गिरा और चाय की गर्मी से रेशम का धागा अलग हो गया। धागे की खूबसूरती से प्रभावित हो कर रानी ने उसका और भी अधिक अन्वेषण तथा विकास कराया जिससे रेशम का जन्म हुआ।

कई सदियों तक रेशम का रहस्य गुप्त रखा गया तथा विश्व के अन्य देशों तक इसका व्यापार किया जाता रहा। फिर हज़ारों वर्षों बाद, तीसरी सदी में इसकी विधि चोरी छिपे जापान पहुंची तथा वहां से भारत और अन्य देशों तक पहुंची। बाद में शहतूत के अलावा कुछ अन्य वृक्षों के पत्तों पर भी रेशम के कीड़े पाले जाने लगे।

वास्तव में रेशम के कीट दो प्रकार के होते हैं। सबसे अधिक प्रचलित मलबेरी अथवा शहतूत के रेशम के कीट होते हैं, जिनका जीव वैज्ञानिक नाम *बॉम्बिक्स मोरी एल.* होता है। ये कीट शहतूत के पत्तों पर पलते हैं तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी पाले जाते हैं और इस प्रकार से पालतू प्रजाति के अंतर्गत आते हैं। भारत में लगभग 90 प्रतिशत रेशम का उत्पादन मलबेरी रेशम कीटों द्वारा होता है जो मुख्यतः उत्तर पूर्वी राज्यों, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, जम्मू व कश्मीर, पं. बंगाल में केंद्रित है।

दूसरे प्रकार का रेशम वन्य रेशम कहलाता है, जिनके कीट शहतूत के पत्तों पर न पल कर कुछ दूसरे प्रकार के पेड़ों के पत्तों पर पलते हैं। ये रेशम के कीड़े एक प्रकार से जंगली या अर्ध पालतू माने जा सकते हैं। इनमें टसर, ओक टसर, एरी तथा मूंगा प्रमुख हैं।

टसर रेशम का निर्माण *एन्थेरिया माइलिटा* नामक कीट द्वारा किया जाता है। यह अर्जुन तथा असान नामक पेड़ के पत्तों पर पलता है। इसका उत्पादन अधिकतर झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, प. बंगाल तथा आंध्रप्रदेश में होता है।

ओक टसर, जो बांज (ओक) के पत्तों पर पलने वाले कीटों द्वारा तैयार किया जाता है, का उत्पादन हमारे देश में 1972 में ही चालू हुआ था। इन कीटों का जीव वैज्ञानिक नाम *एन्थेरिया प्रोयेली जे.* है, जो अधिकतर देश के उत्तर

पूर्वी राज्यों या उत्तरी भारत में उपयोग में लाया जाता है। वैसे विश्व के अधिकतर ओक टसर का उत्पादन चीन में होता है, जहां पर यह कार्य *एन्थरिया पर्नयी* नामक कीटों की मदद से किया जाता है।

एरी सिल्क का उत्पादन अरंडी के वृक्षों पर किया जाता है। यह रेशम कीट *फिलोसामिया रिसिनी* कहलाता है तथा पालतू कीटों की श्रेणी में आता है। एरी रेशम का ककून प्रायः खुले मुंह वाला होता है, अतः इसकी धुनाई तथा कताई कर के रेशम बनाया जाता है। एरी का उत्पादन अधिकतर उत्तर पूर्वी राज्यों, प. बंगाल, उड़ीसा, झारखंड तथा बिहार में होता है।

रेशम उत्पादन के संदर्भ में विश्व में सबसे पहले चीन का नाम आता है। जिसका कुल उत्पादन 65000 मीट्रिक टन है। भारत का स्थान उत्पादन क्रम में दूसरे नंबर पर है। इसके बाद जापान, ब्राजील, कोरिया तथा वियतनाम का स्थान आता है। अलबत्ता, रेशम के उपयोग के मामले में भारत अग्रणी है (कुल उत्पादन 18000 मीट्रिक टन, कुल मांग 25000 मी. टन)। अतः भारत को काफी रेशम आयात करना पड़ता है।

मूंगा रेशम

मूंगा रेशम के धागे बहुत सघन होते हैं (अर्थात उनके बीच में खाली स्थान बहुत कम होता है।) इस कारण इनको ब्लीच करना संभव नहीं होता है। और इसीलिए इसको रंगना भी संभव नहीं है। यही कारण है कि मूंगा सिल्क के कपड़े अपने प्राकृतिक रंग अर्थात सुनहरे भूरे रंग में ही उपलब्ध होते हैं। बस सजावट के लिए इस के बार्डर या बीच-बीच की कढ़ाई अलग-अलग रंगों (प्रायः लाल, हरा व काला) अथवा अलग डिज़ाइनों द्वारा की जाती है। कढ़ाई की डिज़ाइनों में अधिकतर फूल-पत्तियां, पौधे, वन्य पशु, धार्मिक गाथाओं तथा प्राकृतिक वस्तुओं का चित्रण किया जाता है।

इसके अलावा मूंगा रेशम के निर्माण के लिए उपयोग में लाए जाने वाले हथकरघे की चौड़ाई भी कम होती है, इसलिए एक विशेष चौड़ाई से अधिक चौड़े वस्त्र बनाना संभव नहीं होता है। इसी कारण इसका बार्डर अलग से बनाकर साड़ी से जोड़ दिया जाता है।

असम में मूंगा रेशम का उपयोग अधिकतर महिला परिधानों जैसे साड़ी, मेखला (एक तरह का लहंगा) तथा चादर (दुपट्टे की तरह ओढ़ा जाने वाला) के निर्माण में किया जाता है। इसके अलावा इसका उपयोग पुरुषों के कुर्ते के लिए भी किया जाता है।

वैसे तो रेशम की बुनाई उत्तर पूर्व के सभी स्थानों पर होती है और यहां की प्रत्येक महिला कपड़ा बनाने में प्रवीण होती है। वास्तव में उत्तर पूर्व के गांवों के सभी घरों में एक हथकरघा अवश्य होता है, जिस पर घर की महिलाएं अपने कपड़े स्वयं तैयार कर लेती हैं। किंतु बुनाई का सबसे बड़ा केंद्र गुआहाटी के निकट सुआलकुची गांव है जहां अधिकतर रेशम के कपड़े तथा मूंगा परिधान तैयार होते हैं। सुआलकुची को पूर्व का मेनचेस्टर भी कहा जाता है।

वास्तव में मूंगा के रूप में प्रकृति की इस अनमोल धरोहर का और भी अधिक लाभ उठाए जाने की आवश्यकता है। चूंकि मूंगा रेशम अन्यत्र तैयार नहीं होता, अतः इसका समुचित प्रचार-प्रसार कर तथा इसके उत्पादन को और भी अधिक बढ़ा कर मूंगा रेशम का संपूर्ण विश्व में निर्यात किया जा सकता है। इस प्रकार मूंगा रेशम का एकाधिकार वाला बाज़ार स्थापित किया जा सकता है।

और अब सिल्क मार्क

रेशम की शुद्धता तथा गुणवत्ता की कसौटी के लिए अब सिल्क मार्क उपलब्ध है। जिस प्रकार गर्म कपड़ों पर लगाया गया वुलमार्क ऊनी कपड़ों की शुद्धता दर्शाता है तथा स्वर्ण आभूषणों पर लगाया गया हाल मार्क सोने की शुद्धता तथा गुणवत्ता दर्शाता है, उसी प्रकार सिल्क मार्क की मुहर रेशम की असली, शुद्ध तथा गुणवान होने की पहचान है। सिल्क मार्क सभी प्रकार के रेशम (जैसे मलबेरी, टसर, एरी, मूंगा आदि) पर लगाया जाता है। यह कच्चे रेशम, रेशम के धागों, तैयार कपड़ों, रेडीमेड वस्त्रों आदि पर लगाया जाता है। इस प्रकार ग्राहकों को नकली रेशम की मिलावट का डर नहीं रहता है। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***